जैन
पथप्रदर्शक
ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)
नैतिक एवं सामाजिक चेतना का अग्रदूत निष्पक्ष पाक्षिक

पर परमात्मा चाहे कितना ही महान क्यों न हो, उसमें सर्वस्व समर्पण सम्भव नहीं है, उचित भी नहीं है।
- बिन्दु में सिन्धु, पृष्ठ-22

वर्ष : 25, अंक: 7 | **सम्पादक :** पण्डित रतनचन्द भारिल्ल | आजीवन शुल्क : 251 रुपये
जुलाई (प्रथम) 2002 | **प्रबन्ध सम्पादक :** पं. अनुभवप्रकाश जैन एवं पं. संजीवकुमार गोधा | वार्षिक शुल्क : 25 रुपये

सीमंधर जिनालय का शिलान्यास, शिविर एवं बाबू युगलजी की रचनाओं का लोकार्पण

कोटा : यहाँ जैनदर्शन एवं व्यक्तित्व विकास शिविर 19 जून से 23 जून 2002 तक अनेक आयोजनों के साथ सम्पन्न हुआ।

कोटा के उपनगर इन्दिरा विहार में नवीन सीमंधर जिनालय का शिलान्यास हुआ। शिलान्यास विधि के सम्पूर्ण कार्य बाल ब्र. पण्डित अभिनन्दनकुमारजी खनियांधाना एवं बाल ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री सनावद आदि ने सम्पन्न कराये।

शिलान्यास श्री अनन्तभाई अमोलखभाई सेठ एवं सवाईलाल भाई परिवार मुम्बई और सर्वश्री ज्ञानचन्दजी, सुरेन्द्रकुमारजी, अरविन्दजी जैन कोटा द्वारा किया गया। इसी अवसर पर कुन्दकुन्द स्वाध्याय भवन, श्री कुन्दकुन्द अध्ययनशाला का शिलान्यास भी किया गया।

22 जून को श्री कुन्दकुन्द कहान तीर्थसुरक्षा ट्रस्ट के प्रन्यासी मण्डल की बैठक बाबू जुगलकिशोरजी युगल की अध्यक्षता में हुई। रात्रि को कुन्दकुन्द कहान तीर्थसुरक्षा ट्रस्ट की सलाहकार परिषद का अधिवेशन पण्डित धन्यकुमारजी बेलोकर की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। इसी अवसर पर पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील जयपुर ने श्री टोडरमल दिग. जैन सिद्धान्त महाविद्यालय की प्रगति रिपोर्ट सुनाई। सभा का संचालन श्री बसन्तभाई दोशी ने किया।

23 जून 2002 को आ.बाबू युगलजी का अभिनन्दन एवं सम्मान समारोह रखा गया। समारोह की अध्यक्षता साहू रमेशचन्दजी जैन ने की तथा विशिष्ट अतिथि के रूप में डॉ. देवेन्द्रकुमारजी शास्त्री नीमच एवं पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल जयपुर उपस्थित थे।

मुमुक्षु समाज की सभी अखिल भारतीय संस्थाओं की ओर से उनके पदाधिकारियों द्वारा और हर प्रान्त व नगर से पधारे अनेक प्रतिनिधी मुमुक्षुओं द्वारा आ.युगलजी का भावभीना अभिनन्दन किया गया।

अभिनन्दन समारोह के अवसर पर डॉ. देवेन्द्रकुमारजी नीमच, पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल जयपुर, श्री पवनजी अलीगढ़, पण्डित कस्तूरचन्दजी विदिशा, ब्र. सुमतप्रकाशजी खनियांधाना, पण्डित प्रदीपजी झांझरी उज्जैन आदि ने बाबूजी के व्यक्तित्व और समाज के उनके प्रदेय की चर्चा करते हुये अंत में उनके दीर्घ जीवन की कामना की। बाबूजी का यशोगान करते हुये पण्डित राजेन्द्रकुमारजी जबलपुर एवं पण्डित धनसिंहजी 'ज्ञायक' पिड़ावा ने अपनी स्वरचित कवितायें सुनाई। अध्यक्षीय भाषण में साहूजी ने बाबूजी के कर्तृत्व एवं व्यक्तित्व के साथ-साथ तीर्थराज सम्मेद शिखरजी के विकास की भी चर्चा की।

इसी अवसर पर उनकी पद्य रचनायें 'चैतन्य वाटिका' एवं 'चैतन्य विहार' का विमोचन किया गया; जिनका सम्पादन एवं संयोजन पण्डित देवेन्द्रकुमारजी बिजौलिया ने किया। बाबू युगलजी ने अपनी चयनित रचनाओं का सस्वर पाठ कर उपस्थित जन समुदाय को चैतन्य की गहराइयों में डुबो दिया।

इसी अवसर पर संचालित पाँच दिवसीय शिविर में देश के ख्यातिप्राप्त विद्वान बाबू जुगलकिशोरजी 'युगल', ब्र. सुमतप्रकाशजी खनियांधाना, पण्डित प्रदीपकुमारजी झांझरी उज्जैन, पण्डित वीरेन्द्रजी आगरा, पण्डित देवेन्द्रकुमारजी बिजौलिया, पण्डित सुशीलकुमारजी, पण्डित शांतिलालजी सौगानी, पण्डित धनसिंहजी 'ज्ञायक', पण्डित राजकुमारजी, पण्डित अजितजी एवं पण्डित रतनचन्दजी शास्त्री आदि विद्वानों के प्रवचनों व कक्षाओं का लाभ मिला।

इस समारोह में 48 नगरों/गाँवों से चार सौ से अधिक मुमुक्षु पधारे तथा कोटा नगर के स्थानीय साधर्मियों ने भी शिविर में उत्साहपूर्वक भाग लिया। लगभग 20 हजार रुपये का सत्साहित्य घर-घर पहुँचा। साधर्मियों की ओर से शिविर काल में साहित्य पर 50 प्रतिशत की छूट दी गई।

- ज्ञानचन्द जैन
अध्यक्ष, कुन्दकुन्द शिक्षण केन्द्र ट्रस्ट, कोटा

आगामी शिक्षण-शिविर

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर द्वारा दशहरे के अवसर पर लगनेवाला आध्यात्मिक शिक्षण-शिविर 13 अक्टूबर से 22 अक्टूबर 2002 तक श्री टोडरमल स्मारक भवन, ए-4, बापूनगर, जयपुर में आयोजित किया जायेगा। अभी से इष्ट-मित्रों सहित आने का मानस बनायें।

सम्पादकीय –

हरिवंशपुराण : एक अनुशीलन

9

– रतनचन्द भारिल्ल

(गतांक से आगे ....)

कहा जाता है कि चक्रवर्ती भरत को प्रसन्नता के तीन समाचार एक ही साथ प्राप्त हुये, भगवान ऋषभदेव को कैवल्य की उत्पत्ति, आयुधशाला में चक्ररत्न की प्राप्ति और पुत्ररत्न की प्राप्ति; यद्यपि तीनों ही समाचार एक से बढ़कर एक हर्ष के प्रसंग थे; किन्तु भरतजी ने सर्वप्रथम केवलज्ञान की पूजा को ही प्राथमिकता दी, तत्पश्चात् उन्होंने पुत्ररत्न का जन्मोत्सव मनाया और अन्त में चक्ररत्न की पूजा की और उसके बाद निकल पडे छह खण्ड को जीतने। चतुरंग सेना तो उनके साथ थी ही, अनेक राजा भी उनके साथ थे और नाना दिशाओं से आये जनसमूह के आगे चक्ररत्न चल रहा था। गंगा नदी के किनारे-किनारे चलकर गंगासागर पर पहुँचे। वहाँ उन्होंने गंगाद्वार पर मन-वचन-काय की क्रिया को प्रशस्त कर तीन दिन का उपवास किया।

इस प्रकरण से हमें (पाठकों को) यह प्रेरणा मिलती है कि एक साथ अनेक प्रसन्नता के प्रसंगों पर हमें सर्व प्रथम धर्म कार्यों को ही प्राथमिकता देना चाहिये तथा लौकिक कार्य करने के पूर्व मंगलाचरण के रूप में एवं मन-वचन-काय की शुद्धि के लिये कुछ व्रत-उपवास तथा संयम-साधना भी करना चाहिये। जैसा कि भरतजी ने पूर्वोक्त प्रसंगों पर किया था।

चक्रवर्ती भरतजी जब विजयार्द्ध पर्वत की वेदिका के समीप आये, वहाँ भी उन्होंने उपवास कर पर्वत के अधिष्ठाता विजयार्द्धकुमार देव का स्मरण किया। वह तुरंत आया और अधीनता स्वीकार की। इसप्रकार जहाँ-जहाँ भी भरतजी गये, वहाँ के अधिष्ठाता देव, विद्याधर एवं आर्यखण्ड के और म्लेच्छ खण्ड के राजाओं ने अनकी आधीनता तो स्वीकार की ही; उनका आदर सत्कार किया एवं अपनी कन्यारत्न भी उन्हें प्रदान किये।

इसतरह अतिशय कुशल भरत ने साठ हजार वर्षों में एक आर्य खण्ड एवं पांच म्लेच्छ खण्ड – इसतरह छह खण्डों से युक्त समस्त भरत क्षेत्र को जीतकर अयोध्या नगरी की ओर प्रस्थान किया।

अयोध्या नगरी के समीप आने पर जब सुदर्शनचक्र ने अयोध्या नगर में प्रवेश नहीं किया तब भरत ने बुद्धिसागर पुरोहित से पूछा – समस्त भरत क्षेत्र को वश में कर लेने पर भी यह दिव्य चक्ररत्न अयोध्या में प्रवेश क्यों नहीं कर रहा है ? अब तो युद्ध के योग्य कोई नहीं है।

पुरोहित ने कहा – अन्य सभी भाई-बन्धुओं ने आपके सुदर्शनचक्र का सम्मान तो किया; परन्तु अनेकों ने इसी निमित्त से संसार की असारता का स्वरूप जानकर जैनेश्वरी दीक्षायें भी ले लीं। परन्तु आपके महाबलवान भाई बाहुबली ने आपकी आधीनता स्वीकार नहीं की। भरत ने बाहुबली के पास साम, दाम आदि नीति में निपुण दूत बाहुबली के पास भेजे; परन्तु कुमार बाहुबली ने भरत के प्रति उनकी आधीनता स्वीकार करने में अपनी असमर्थता प्रकट की। भरत की आदेश के प्रतिकूल अपना स्पष्ट उत्तर दिया कि मैं आपके आधीन नहीं हूँ। बाहुबली ने इतना ही नहीं किया; बल्कि भरत के पास युद्ध करने की सूचना हेतु अपने दूत भी भेज दिये तथा शीघ्र ही अक्षौहणी सेना के साथ युद्ध के लिये पोदनपुर से निकल भी पडे।

इधर चक्रवर्ती भरत भी सदल-बल आ पहुँचे और दोनों सेनाओं में मुठ-भेड प्रारंभ हो गयी। युद्ध में नृशंस नरसंहार होते देख दोनों राजाओं के महामंत्रियों ने परस्पर सलाह कर भरत एवं बाहुबली से कहा कि ऐसा कोई मध्य मार्ग (उपाय) निकाला जाय जिससे बिना कारण नरसंहार न हो। यदि गुस्ताखी माफ हो तो हम कुछ निवेदन करें; जैसा कि हम लोगों की तुच्छ बुद्धि में आया है।

यहाँ मंत्रियों के उचित निवेदन को स्वीकार करते हुये दोनों भाईयों ने कहा – कहो-कहो ! आप लोग क्या कहना चाहते हैं।

मंत्रियों ने कहा – क्यों न दोनों राजाओं के मध्य शक्ति परीक्षण हेतु धर्मयुद्ध के रूप में दृष्टियुद्ध, जलयुद्ध एवं मलयुद्ध करके हार-जीत का निर्णय हो जाये। मंत्रियों का यह प्रस्ताव मान्य हो गया। सर्वप्रथम दृष्टि युद्ध प्रारंभ हो गया और चिरकाल तक दोनों भाई पलकों की टिमकार किए बिना खडे रहे। अन्ततोगत्वा बाहुबली विजयी हुये। दूसरा दोनों भाईयों के बीच भयंकर जलयुद्ध हुआ; परन्तु इस युद्ध में भी बाहुबली की ही जीत हुई, तदनंतर दोनों का रंग-भूमि में मलयुद्ध हुआ, उनका यह मलयुद्ध भी देखने लायक था। अन्त में दयावान बाहुबली अपने भुजाओं से भरत को ऊपर की ओर उठाकर इसप्रकार खड़े हो गये मानो कोई देव रत्नों के पर्वत को उठाकर खड़ा हो गया।

जब तीनों युद्धों में भरतजी हार गये तो थोड़ी देर के लिये वे आपे से बाहर हो उठे। क्रोधावेश में आकर उन्होंने अपमृत्युकारक सुदर्शन चक्र का स्मरण किया। उनके स्मरण करते ही हजार आरोंवाला सुदर्शनचक्र उनके हाथ में आ गया। एक हजार रक्षक जिसकी रक्षा कर रहे थे तथा जो सूर्य के समान दैदीप्यमान प्रभा का धारक था – ऐसे सुदर्शन चक्र को उन्होंने ऊपर की ओर घुमाकर बाहुबली का घात करने के लिये छोड़ दिया। परन्तु वह देवाधिष्ठित चक्र चरमोत्तम शरीर के धारक बाहुबली को मारने में असमर्थ रहा। हुआ यह कि वह चक्र बाहुबली को तीन प्रदक्षिणायें देकर वापिस भरत के हाथ में आ गया।

बाहुबली अपने बड़े भाई भरत को इसप्रकार क्रोधित और निर्दयी देख चंचला राज्य लक्ष्मी की निन्दा आलोचना करते हुये उसे धिक्कारते हैं। सोचते हैं कि जिसके कारण भरतजी भाई पर चक्र चलाने से नहीं चूके उस राज्य को धिक्कार है। वे विवेकी तो थे ही, संसार की असारता और व्यक्ति मोहवश यहाँ तक गिर सकता है, यह सब देखकर उन्हें वैराग्य हो गया और वे राज्य का परित्याग कर तप करने लगे। कैलाश पर्वत पर एक वर्ष का प्रतिमायोग लेकर निश्चल खड़े हो गये। उनके निश्चल खड़े चरण वामी के बिलों से निकले हुये मणिभूषित सर्पों से इसप्रकार सुशोभित हो रहे थे, जिसप्रकार की पहले मणिभूषित आश्रित राजाओं से सुशोभित होते थे।

जिन भरत ने भाई बाहुबली पर चक्र चलाया था, उन्ही भरत ने तपश्चरण में लीन मुनिराज बाहुबली को नमन करके अपनी मनुष्य पर्याय को धन्य कहा। बाहुबली मुनिराज कषायों का अन्त कर तथा केवलज्ञान प्राप्त कर भगवान ऋषभदेव के सभासद हो गये, उनके समवशरण में पहुँच गये।

(क्रमशः)

कहान सन्देश

मोक्षमार्ग का प्रथम सोपान

(सम्यग्दर्शन पुस्तक के आधार से)

(103 वीं किस्त)

(गतांक से आगे .....)

(2) दूसरी बात ह्न यह वास्तविकता है कि अज्ञानी जीव ने अनन्त बार तीर्थंकर भगवान के समवशरण में जाकर उनकी दिव्यध्वनि में शुद्धात्मा की बात भी सुनी, तथापी आचार्य यहाँ कहते हैं कि ह्न अज्ञानी जीवों ने आज तक शुद्धात्मा की बात सुनी ही नहीं, आत्मा के शुद्ध स्वभाव की वार्ता सुनी ही नहीं; क्योंकि उन्होंने अन्तर की रुचि से उसरूप परिणमन नहीं किया, शुद्धात्मा का अनुभव नहीं किया। इसीकारण ऐसा कहा है कि अज्ञानी ने शुद्धात्मा की बात नहीं सुनी। शुद्धात्मा को सुनना उसे ही कहते हैं, जब शुद्धात्मा के कथन का आशय समझ कर तदनुसार परिणमन करे, जब तक उसरूप परिणमन नहीं है तब तक उसने सुना - ऐसा कहना बनता नहीं है ।

यहाँ भावपूर्वक सुनने और सुनकर आत्मा के अनुभव होने को ही सुनना कहा जा रहा है। जब तीर्थंकर की दिव्यध्वनि (वाणी) रूप निमित्त के साथ श्रोता के उपादान के भावों का मेल खाये तभी सुनना सार्थक होता है और उसे ही सच्चा श्रवण करना कहा जाता है; परन्तु अज्ञानी के अनन्त बार दिव्यध्वनि सुनी फिर भी आत्मानुभव नहीं हुआ, अत: आचार्य देव ने यहाँ यह कहा है कि उसने दिव्यध्वनि कभी सुनी ही नहीं। बापू ! आचार्यों के कथन की अपेक्षा को समझना चाहिए।

भले ही समवशरण में दिव्यध्वनि सुनता हो, किन्तु यदि अन्तर में व्यवहार का पक्ष रखे तो उसने वस्तुत: शुद्धात्मा का श्रवण किया ही नहीं। मात्र आत्मा के शब्द ही कान में पड़े सो वह शुद्धात्मा का श्रवण नहीं है। शुद्धात्मा के श्रवण में सुनना, उसका श्रद्धापूर्वक परिचय होना और अनुभव होना ह्न इन तीनों की एकता चाहिए। यही शुद्धात्मा का यथार्थ श्रवण है। ऐसा श्रवण अज्ञानी जीवों ने कभी नहीं किया, अत: आचार्य यहाँ कहते हैं कि अब तू शुद्धात्मा की बात को रुचि पूर्वक इस समयसार की बात को सुनना, समझना और मनन करना तथा अनुभव करना।

धर्मकथा या विकथा मात्र शब्दों में नहीं होती किन्तु भावों पर ही इनका आधार है। भले युद्ध का वर्णन हो या शारीरिक सौंदर्य का नख-शिख वर्णन हो; किन्तु यदि श्रोता उन्हें सुनकर भी वैराग्य का पोषण करता है तो वह कथा वैराग कथा, धर्मकथा है तथा वहीं शब्द या कथाा सुनकर यदि रागी जीव विषय-कषाय का पोषण करता है तो वही विकथा है, पापवचन का कारण है। उसीप्रकार यहाँ तो जीव शुद्धात्मा की बात सुनकर शुद्धात्मा की ही रुचि (श्रद्धा) करे और उसी का अनुभव करे तो उसने ही शुद्धात्मा की बात श्रवण की है - यह कहा जाता है। इसतरह निमित्तों पर कुछ भी वजन नहीं रहा; किन्तु अपने उपादान में रुचि के भाव पर ही वजन आया।

जैसे कि कोई पिता अपने पुत्र से कहे कि तुम बाजार जाकर शक्कर (चीनी) लेकर आओ। उसका पुत्र शक्कर के बदले गुड ले आवे तो ऐसा कहा जाता है कि उसने पिता की बात सुनी ही नही है। उसीतरह तीर्थंकर भगवान या आचार्य देव शुद्ध आत्मा का स्वरूप बतायें, उसी का अनुभव करने को कहें; परन्तु श्रोता शुद्धात्मा का अनुभव न करके विकारी आत्मा को ही जाने, रागसहित आत्मा का ही अनुभव करे तो यह कहा जाता है कि यह जीव आत्मा की बात सुनता ही नहीं है।

भगवान की वाणी में तो एकसाथ निश्चय-व्यवहार आदि का वर्णन आता है। उसे सुनकर अज्ञानी कहता है ह्न ''व्यवहार है न ! राग है न ! निमित्त है न !'' इसतरह जो जीव व्यवहार पर या निमित्तों पर ही जोर देते है और निज शुद्धात्मा के ज्ञायकस्वभाव पर जोर नहीं देते । अपनी रुचि को निज शुद्धात्मा की ओर नहीं मोड़ते, उन्होंने सचमुच भगवान की वाणी को सुनी ही नहीं यदि आत्मा के शुद्ध स्वभाव की बात एकबार भी प्रीतिपूर्वक सुनले तो अल्प काल में ही उसको मुक्ति मिले बिना न रहे ह्न ऐसा यहाँ आचार्य कह रहे हैं।

समयसार सुननेवाला शिष्य भी ऐसा सुपात्र है कि समयसार में बताया गया आत्मा का एकत्व स्वरूप सुनने में उसे उत्साह आता है और उसके सुनने में भी उसे अपूर्वता का आभास होता है। वर्तमान में मैं जिस भाव से सुनता हूँ, ऐसे भावों से इसके पहले मैंने कभी सुना ही नहीं। इसतरह वह अपने भावों में अपूर्वता लाकर सुनता है, इससे निमित्तों में भी अपूर्वता का आरोप आता है। यद्यपि पूर्व में शुद्धात्मा का ऐसा श्रवण परिचय और अनुभव नहीं किया, परंतु अब अपूर्व रुचि प्रगट करके आत्मा का श्रवण-मंथन और स्वानुभव करने के लिए श्रोता तैयार हुए हैं।

यहाँ आचार्य पूर्व के श्रवण को निमित्त रूप से भी नहीं स्वीकार करते; क्योंकि उस समय जीव में नैमित्तिक भाव नहीं था। नैमित्तिक भाव प्रगट हुए बिना निमित्त किसका ? शुद्ध आत्मा की बात पूर्व में कभी सुनी ही नहीं ह्न ऐसा कहकर श्री आचार्य देव एकत्व स्वभाव के श्रवण को अपूर्व रूप से स्वीकार करते हैं।

यदि उपादान में अपूर्वता प्रारंभ न हो तो निमित्त की अपूर्वता को स्वीकार ही कौन करेगा ? निमित्त-नैमित्तिक दोनों के मेलपूर्वक एकत्व-स्वानुभव का श्रवण पूर्व में कभी नहीं किया। निमित्त-नैमित्तिक भाव के सुमेल का श्रवण अपूर्व है, उसमें जीव का नैमित्तिक भाव भी अपूर्व है तथा उस अपूर्व भाव का निमित्त होने से वह निमित्त भी अपूर्व है। **(क्रमश:)**

श्री वीतराग-विज्ञान विद्यापीठ परीक्षा बोर्ड
श्री टोडरमल स्मारक भवन

ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015 (राजस्थान)

ग्रीष्मकालीन परीक्षा कार्यक्रम सत्र-2002

दिन व दिनांक	नाम ग्रन्थ
शुक्रवार 26 जुलाई 2002	1. बालबोध पाठमाला भाग1 (बा.प्रथम खण्ड) मौखिक 2. जैन बालपोथी भाग 1 (मौखिक) 3. वीतराग-विज्ञान पाठमाला भाग1(प्रवेशिका प्रथम खण्ड) 4. तत्त्वज्ञान पाठमाला भाग1 5. छहढाला (पूर्ण) 6. तत्त्वार्थसूत्र (मोक्षशास्त्र) पूर्वार्द्ध 7. मोक्षमार्गप्रकाशक (पूर्वार्द्ध) 8. जैन सिद्धान्त प्रवेशिका (बरैयाजी) 9. विशारद द्वितीय खण्ड (प्रथम वर्ष)
शनिवार 27 जुलाई 2002	1. बालबोध पाठमाला भाग 2 (बा.द्वितीय खण्ड) मौखिक 2. जैन बालपोथी भाग 2 (मौखिक) 3. वीतराग-विज्ञान पाठमाला भाग 2(प्रवेशिका द्वितीय खण्ड) 4. तत्त्वज्ञान पाठमाला भाग 2 5. द्रव्यसंग्रह (पूर्ण) 6. तत्त्वार्थसूत्र (मोक्षशास्त्र) उत्तरार्द्ध 7. लघु जैनसिद्धान्त प्रवेशिका (सोनगढ़) 8. मोक्षमार्गप्रकाशक (उत्तरार्द्ध) 9. विशारद प्रथम खण्ड (प्रथम वर्ष) 10. विशारद द्वितीय खण्ड (द्वितीय वर्ष)
रविवार 28 जुलाई 2002	1. बालबोध पाठमाला भाग 3 (बा.तृतीय खण्ड) मौखिक 2. वीतराग-विज्ञान पाठमाला भाग 3 (प्रवेशिका तृतीय खण्ड) 3. रत्नकरण्डश्रावकाचार (पूर्ण) 4. पुरुषार्थसिद्धयुपाय (पूर्ण) 5. विशारद प्रथम खण्ड (द्वितीय वर्ष)

नोट -

(1) सुविधानुसार परीक्षा का समय सुबह 9 बजे से शाम 5 बजे तक के बीच में कभी भी सैट किया जा सकता है।

(2) जहाँ एक से अधिक केन्द्र हों, वे आपस में मिलकर समय निश्चित करें।

(3) यदि किन्हीं विषयों के छात्र आपस में टकराते हों तो परीक्षा सुविधानुसार दिन में दो बार ली जा सकती है।

(4) बालबोध पाठमाला भाग 1, 2, 3 और जैन बालपोथी भाग 1 व 2 की परीक्षायें मौखिक में लेवें।
शेष सभी विषयों की परीक्षायें लिखित में लेवें।

पर्यटन (तीर्थदर्शन)

उत्तरप्रदेश

हस्तिनापुर (तीर्थ क्षेत्र)

मार्ग-स्थिति : दिल्ली से वाया मेरठ 97 कि॰मी॰ एवं रेलवे स्टेशन मेरठ से 37 कि॰मी॰ दूर है।

हस्तिनापुर एक प्राचीनतम सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक नगरी है। इसका संबंध बहुत&सी प्राचीन घटनाओं के साथ जुड़ा होने के कारण यह तीर्थरूप में मान्य है।

भगवान ऋषभदेव के काल की इस नगरी में राजा श्रेयांस को एक वर्ष के उपवास के पश्चात् अक्षय तृतीया के दिन उन्हें इक्षुरस से युग के प्रथम आहारदान का गौरव प्राप्त हुआ है। यहाँ आदिनाथ भगवान का अनेक बार समवशरण आया। इस नगर में ही भगवान शांतिनाथ, कुंथुनाथ एवं अरहनाथ के गर्भ, जन्म, तप एवं ज्ञान कल्याणक हुए। इन तीर्थंकरों ने यहीं से छह खंड पृथ्वी को विजित कर चक्रवर्ती पद भी प्राप्त किया। कहा जाता है कि भगवान मल्लिनाथ एवं भगवान पार्श्वनाथ के समवशरण भी यहाँ आये थे।

हस्तिनापुर कौरवों की राजधानी कुरु&जांगल भी था। यहीं महाभारत की अनेक घटनायें, यथा – लाक्षागृह की घटना, पांडवों की राजधानी, नेमिनाथ की दीक्षा आदि घटित हुईं। यहीं सनत्कुमार, सुभौमकुमार आदि चक्रवर्ती भी हुए। हस्तिनापुर में ही बलि एवं उसके मंत्रियों ने अकंपनाचार्य और 700 मुनियों पर उपसर्ग किया तब मुनि विष्णुकुमार ने स्वयं को वामनरूप से बड़ाकर तीन पैर में धरती को नापकर उन मुनियों की रक्षा की, तभी से रक्षाबंधन पर्व मनाया जाता है। इसीप्रकार यह गुरुदत्तादि अनेक मुनियों की जन्म तथा साधनास्थली भी रही है।

वर्तमान में दिल्ली के मुगल शासक शाह आलम के खजांची हरसुखराय द्वारा सन् 1801 में निर्मित कराया गया भव्य जिनालय है। भगवान महावीर के 2500वें निर्वाणोत्सव के उपलक्ष में यहाँ बाहुबली मंदिर, 24 तीर्थंकरों की टोंकें, जलमंदिर, पांडुक शिला आदि निर्मित हुए हैं। मुख्य मंदिर से 1 से 4 कि॰मी॰ की दूरी पर भगवान शांतिनाथ, कुंथुनाथ, अरहनाथ के चरण&चिन्हों सहित 3 नसियाँ हैं। हाल ही में निकटस्थ नहर की खुदाई में अनेक प्राचीन जैन मूर्तियाँ भी उपलब्ध हुई हैं।

सन् 1974 के पश्चात् बड़े मंदिर से एक फर्लांग दूर एक विशाल भूखंड पर विश्व में प्रथम बार जम्बूद्वीप की अनुपम एवं अत्यंत सुंदर विशाल रचना निर्मित की गई है। साथ ही कलात्मक बाहुबली मंदिर, जलमंदिर, चौबीस टोंक, विद्युतचलित प्रदर्शनी, शास्त्र भंडार, गुरुकुल आश्रम आदि हैं। इसप्रकार यह दिग॰ जैन त्रिलोक संस्थान नामक क्षेत्र भक्तों एवं पर्यटकों के लिए दर्शनीय तथा आकर्षक स्थल हो गया है। जम्बूद्वीप में 84 फीट उत्तंग सुमेरु पर्वत, 78 अकृत्रिम चैत्यालय और 201 देव भवन के चैत्यालय, नदियों, पर्वत, लवण समुद्र आदि का निर्माण विशेष दर्शनीय है।

बाल संस्कार शिविर सानन्द सम्पन्न

गुना : यहाँ दिनांक 3 जून 2002 से 15 जून 2002 तक मुमुक्षु मण्डल के संरक्षण में एवं के.के.पी.पी.एस. उज्जैन के तत्त्वावधान में अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन शाखा गुना द्वारा एक आध्यात्मिक शिक्षण एवं बाल संस्कार शिविर का भव्य आयोजन किया गया।

झण्डारोहण डॉ. विनोदकुमार जैन ने तथा शिविर का उद्घाटन श्री विजयकुमार जैन ने किया। अध्यक्ष श्री पदमकुमार जैन 'एडवोकेट' तथा मुख्य अतिथि श्री सूरजमल पाटनी, श्री राजकुमार जैन एवं डॉ.विमलकुमार जैन थे। श्री टोडरमल दि. जैन सि. महाविद्यालय जयपुर के भूतपूर्व छात्र पण्डित अनिलकुमारजी शास्त्री एवं पण्डित रमेशचन्दजी शास्त्री जयपुर ने शिविर की उपयोगिता पर प्रकाश डाला। संचालन पण्डित सुरेशचन्दजी शास्त्री ने किया।

शिविर में पण्डित रमेशचन्दजी शास्त्री जयपुर, पण्डित अरविन्दकुमारजी शास्त्री सुजानगढ़, पण्डित प्रदीपकुमारजी शास्त्री टीकमगढ़, पण्डित अशोककुमारजी मांगुलकर राघोगढ़, पण्डित अनिलकुमारजी शास्त्री, श्रीमती ममता जैन जयपुर, श्रीमती विमला जैन एवं श्रीमती शारदा जैन द्वारा बाल पाथी भाग-1, बालबोध पाठमाला भाग-1, 2, 3, छहढाला एवं निमित्त-उपादान की कक्षायें लीं गई।

शिविर के बीच महावीर जिनालय पर भी पण्डित राजकुमारजी शास्त्री के प्रवचनों का लाभ भी समाज को मिला। शिविर में 380 बालक-बालिकाओं ने उत्साहपूर्वक भाग लिया।

दिनांक 18 जून 2002 को सीमंधर जिनालय में अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन द्वारा भक्तामर मण्डल विधान का आयोजन किया गया।

सभी कार्यक्रम पण्डित सुरेशचंदजी शास्त्री गुना के कुशल निर्देशन में सम्पन्न हुये। आयोजन में अ. भा. जैन युवा फैडरेशन गुना, मुमुक्षु मण्डल गुना एवं के.के.पी.पी.एस. उज्जैन का पूर्ण सहयोग रहा। **- अजित जैन**

वेदी प्रतिष्ठा सानन्द सम्पन्न

उदयपुर : यहाँ श्री चन्द्रप्रभ जिन चैत्यालय आदर्शनगर में 21व 22 जून 2002 को श्री ललितकुमारजी, श्री रमेशचन्दजी एवं श्री सतीशचन्दजी द्वारा वेदी प्रतिष्ठा का आयोजन किया गया।

इस अवसर पर डॉ. महावीरप्रसाद जैन टोकर के समयसार पर प्रवचनों के साथ-साथ पण्डित वीरेन्द्रकुमारजी शास्त्री उदयपुर, पण्डित हेमन्तकुमारजी शास्त्री, पण्डित जिनेन्द्रकुमारजी शास्त्री एवं पण्डित सुदीपकुमारजी शास्त्री घाटोल आदि विद्वानों का प्रवचनों एवं कक्षाओं का लाभ भी मिला।

दिनांक 22 जून को प्रात: प्रवचन, मण्डल विधान एवं शोभायात्रा के पश्चात श्रीजी को वेदी में विराजमान किया गया। विधि-विधान के सम्पूर्ण कार्य पण्डित महावीरप्रसादजी टोकर द्वारा सम्पन्न कराये गये।

सभी कार्यक्रमों मे लगभग 500 मुमुक्षु भाई-बहनों ने लाभ लिया।

- नेमीचन्द कौशल्या

साहू जैन ट्रस्ट की छात्रवृत्ति के लिये आवेदन

नई दिल्ली : टाइम्स ऑफ इण्डिया ग्रुप की लोकोपकारी संस्था साहू जैन ट्रस्ट ने गत वर्षों की भांति इस वर्ष भी भारत एवं विदेशों में उच्च शिक्षा के लिये छात्रवृत्ति देने की घोषणा की है।

भारत में तकनीकी, इंजीनियरिंग, कम्प्यूटर, मेडिकल, स्नातक, स्नातकोत्तर आदि शिक्षा के लिये 150/- से 1000/- मासिक तक की छात्रवृत्ति के लिये 20 जुलाई तक आवेदन पत्र मंगाकर 30 जुलाई 2002 तक जमा कराने हैं।

इच्छित आवेदन पत्र मंगाने के लिये 9''4'' का स्वयं का पता लिखा 5/- का स्टाम्प लगा लिफाफा सचिव, साहू जैन ट्रस्ट, टाइम्स हाउस, 7 बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002 को भेजें।

- सोमचन्द्र जैन, सचिव

आवश्यकता

श्री चन्द्रप्रभ दिगम्बर जैन मन्दिर, बीस पंथी ट्रस्ट, चौमूं (जयपुर) हेतु एक पुजारी की आवश्यकता है। प्रात: काल पूजा-प्रक्षाल करे एवं दिन में मंदिर में ही आराम करे। आवास एवं बिजली-पानी की सुविधा नि:शुल्क है। वेतन 2000/- रुपये प्रतिमाह है। सम्पर्क करें - **मंत्री,**

चन्द्रप्रभ दिग.जैन मंदिर, बीस पंथी ट्रस्ट, चौमूं-जयपुर

आवश्यकता

पार्श्वनाथ दिग. जैन पंचायती मंदिर हेतु एक ऐसे साधर्मी सज्जन की आवश्यकता है जो कि प्रात: मंदिर में पूजा-प्रक्षाल में सहयोग करे तथा दिन में मैनेजर के रूप में मंदिर की देखभाल कर सके। पारिश्रमिक योग्यतानुसार।

निम्न पते पर सम्पर्क करें -

- ज्वालाप्रसाद जैन, एडवोकेट,

5/16, कसेरट बाजार, ताजगंज, आगरा-282001 (उ.प्र.)

शिक्षण-शिविर सानन्द सम्पन्न

बानपुर (उ.प्र.) : यहाँ सीमंधर जिनालय में दिनांक 25 मई से 4 जून 2002 तक अध्यात्म प्रचार-प्रसार समिति बानपुर द्वारा एक शिक्षण शिविर का आयोजन किया गया। शिविर का उद्घाटन चौ.बाबूलाल जैन एवं श्री प्रेमचन्दजी जैन ने किया।

प्रतिदिन प्रात: बालकों के लिये पण्डित नवीनजी एवं पण्डित जितेन्द्रजी शास्त्री बानपुर द्वारा जिनपूजन रहस्य पर तथा पण्डित पंकजजी द्वारा नैतिक शिक्षा पर कक्षा ली जाती थी। दोपहर में महिलाओं की कक्षा चलती थी। सायंकाल भक्ति के पश्चात् पण्डित विकासजी शास्त्री द्वारा तत्त्वार्थसूत्र पर कक्षा ली गई। रात्रि में प्रतिदिन सांस्कृतिक कार्यक्रम आयोजित किये गये। कार्यक्रम श्री पुष्पेन्द्र जैन, राजीव जैन व नीरज जैन के सहयोग से सम्पन्न हुये। **- विकास शास्त्री**

जुलाई माह में आनेवाली 24 तीर्थंकरों के पंचकल्याणकों की तिथियाँ

3 जुलाई	- भगवान नेमीनाथ का मोक्षकल्याणक
5 जुलाई	- भगवान नमिनाथ का जन्म एवं तप कल्याणक
15 जुलाई	- भगवान महावीर का गर्भ कल्याणक
17 जुलाई	- भगवान विमलनाथ का मोक्षकल्याणक तथा अष्टान्हिका पर्व प्रारम्भ
23 जुलाई	- अष्टान्हिका पर्व समाप्त एवं वीर शासन जयन्ती
26 जुलाई	- भगवान मुनिसुव्रतनाथ गर्भकल्याणक

समयसार का सार 49

गतांक से आगे

– डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

शास्त्र में तो यहाँ तक भी आता है कि चक्रवर्ती के पटरानी से उसके कोई संतान नहीं होती है। यदि पटरानी मासिकधर्म से होती और उसके संतान होती तो चक्रवर्ती के भोग में अंतराय होता, विध्न होता है। चक्रवर्ती के इतना पुण्य का उदय है कि उसके भोगों में कभी अंतराय नहीं आता है, गजब की बात तो यह है कि ऐसी अवस्था में भी उसके आस्रव और बंध नहीं होता।

मोह माने चारित्र मोहनीय का विलास, जहाँ ऐसा दिखाई देता है। दर्शनमोह की तो यहाँ बात ही नहीं चल रही है –'पूछत शिष्य अचारज सौं, सम्यक्वंत निरास्रव कैसी।'

इसका उत्तर इसप्रकार है –

'पूरव अवस्था जे करम बंध कीने अब,
तेई उदै आइ नाना भांति रस देत हैं।
केई सुभ साता केई असुभ असाता रूप
दोहूं सौं न राग न विरोध समचेत है।।
यथा जोग क्रिया करैं फल की न इच्छा धरैं,
जीवन मुकति कौ बिरद गहि लेत है।
यातै ग्यानवंत कौं न आस्रव कहत कोऊ,
मुद्धता सों न्यारे भए सुद्धता समेत हैं।।'

पूर्व अवस्था में जो कर्म बांधे थे, वह अब उदय में आकर नाना रस देते हैं। यह जो सब संयोग दिखाई दे रहे हैं, वह सब उन कर्मों का ही फल है। इसमें चक्रवर्ती या सम्यग्दृटि का कुछ भी नहीं है यह तो सब पूर्वपुण्योदय का परिणाम है। संयोग जोड़ने से कभी जुड़ते नहीं है।

परिग्रह का संयोग हुआ और चारित्र मोहनीय कर्म बंधा; उसके उदय में आने पर राग हुआ और उस चारित्रमोहजन्य राग के कारण भोगों में उपयोग लगकर भोग का अभाव भी हुआ और भोगों को भोगना भी हुआ। साता एवं असाता दोनों की उपस्थिति से पाप का उदय आ जाने से कभी–कभी चक्रवर्ती का अपमान भी हुआ। ज्ञानी चक्रवर्ती तो ऐसा होता है, जैसाकि इस छन्द में स्पष्ट है –'यथा राज किरिया करें तहूँ न होवे राग।'

दोनों साता, असाता की स्थितियों में चक्रवर्ती को न किसी में राग है न किसी से विरोध है; उसके लिए तो दोनों समान हैं। दोनों में एकसा समताभाव है। जैसी भूमिका के अनुसार क्रिया होती है, वैसी क्रिया करता है; लेकिन उसमें कोई आकांक्षा नहीं है, श्रद्धा संबंधी इच्छा नहीं है। इसलिए उन्हें आस्रव नहीं होता है – ऐसा कहा जाता है। ज्ञानीजीव को आस्रव नहीं है – ऐसा इसलिए कहा जाता है; क्योंकि उन्होंने शुद्धता को सम्हाला है – उनमें अशुद्धता है; लेकिन मैं इससे भिन्न हूँ – ऐसा उनकी दृष्टि में है। इसलिए भोगों के संयोग में रहते हुए भी ज्ञानियों के आस्रव, बंध नहीं होता है।

तेरहवाँ प्रवचन

समयसार परमागम का संवर अधिकार भेदविज्ञान के अभिनंदन का अधिकार है। भेदविज्ञान की चर्चा तो समयसार के जीवाजीवाधिकार से ही प्रारम्भ हो गई थी; वैसे तो संपूर्ण समयसार ही भेदविज्ञान के लिए समर्पित शास्त्र है।

जीवाजीवाधिकार में 29 प्रकार के भावों से आत्मा को भिन्न बताया है। इस संवर अधिकार में उन 29 प्रकार के भावों को द्रव्यकर्म, भावकर्म और नोकर्म – इसप्रकार तीन भागों में विभाजित किया है। द्रव्यकर्म में ज्ञानावरणादि आठ कर्म, भावकर्म में मोह–राग–द्वेष के परिणाम एवं नोकर्म में शरीर, स्त्री–पुत्र, मकान–जायजाद, ग्राम, नगर, देश आदि सम्मिलित होते हैं। इन तीनप्रकार के कर्मों से आत्मा को भिन्न जानना ही भेदविज्ञान है।

जीवाजीवाधिकार में बताये गये 29 प्रकार के भावों या फिर इन तीन प्रकार के कर्मों में एकत्वबुद्धि और ममत्वबुद्धि का निषेधा करके भेदविज्ञान कराया गया है। कर्त्ताकर्माधिकार में इन तीनप्रकार के कर्मों से कर्त्तृत्वबुद्धि और भोक्तृत्वबुद्धि का निषेध करके भेदविज्ञान कराया गया है। पुण्यपापाधिकार में परस्पर अभिन्न ऐसे कर्मजाति के पुण्य–पाप भावों से आत्मा को भिन्न बताकर उनसे भेदविज्ञान कराया गया है। आस्रवाधिकार में पुण्य–पाप भाव आस्रव है और आत्मा इन आस्रवभावों से भिन्न है, इसप्रकार आस्रवों से आत्मा का भेदविज्ञान कराया गया है। इसप्रकार समयसार के ये चारों अधिकार एकप्रकार से भेदविज्ञान के लिए ही समर्पित हैं।

भेदविज्ञान से सम्पन्न ज्ञानी धर्मात्मा भोगों के मध्य रहते हुए भी कर्मों से नहीं बंधता है – आस्रवाधिकार में ऐसा कहा गया है; लेकिन आस्रवाधिकार का मूल प्रयोजन आस्रव भिन्न है और आत्मा भिन्न है – यह बताना ही है। इसका संकेत कर्त्ताकर्म अधिकार की आरम्भ की इस गाथा में दिया था –

जाण ण वेदि विसेसंतरं तु आदासवाण दोह्णंपि।
अण्णाणी ताव दु सो कोहादिसु वट्टदे जीवो।।69।।

जबतक यह जीव आत्मा और आस्रवों – इन दोनों के भेद और अन्तर को नहीं जानता है, तबतक वह अज्ञानी रहता हुआ क्रोधादि आस्रवों में प्रवर्तता है। इन भावों को करता हुआ ज्ञानावरणादिक कर्मों का संचय करता है और इसतरह वह बंधन में पड़ता है। इसप्रकार यद्यपि आत्मा और आस्रवों की भिन्नता का कथन कर्त्ताकर्माधिकार में है; लेकिन इसका वास्तविक विशलेषण आस्रवाधिकार में है। इसतरह आचार्य निरंतर जीवाजीवाधिकार से लेकर आस्रवाधिकार तक द्रव्यकर्म, भावकर्म एवं नोकर्मों से भेदविज्ञान कराते आ रहे हैं।

अब, इस संवर अधिकार में भी विशेषरूप से भेदविज्ञान की ही चर्चा है। यह भेदविज्ञान का प्रकरण अन्य अधिकारों में आगत भेदविज्ञान के प्रकरण से पृथक् है। अन्य अधिकारों में

जहाँ मात्र भेदविज्ञान की चर्चा निहित है; वहाँ इस अधिकार में भेदविज्ञान की चर्चा के साथ–साथ भेदविज्ञान की महिमा भी गायी गई है। इस अधिकार में भेदविज्ञान की महत्ता बतायी है।

इसीलिये तो मैं कहता हूँ कि यह भेद–विज्ञान के अभिनन्दन का अधिकार है। इस अधिकार की आरंभिक गाथाओं की जो उत्थानिका आत्मख्याति टीका में दी गई है, उसमें भी कहा गया है कि –

तत्रादावेव सकलकर्मसंवरणस्य परमोपायं भेदविज्ञानमभिनंदति।

अब सबसे पहले सम्पूर्ण कर्मों का संवर करने का उत्कृष्ट उपाय जो भेदविज्ञान है; उसका अभिनन्दन करते हैं।

आचार्य भेदविज्ञान का अभिनन्दन करते हुए अधिकार का आरम्भ इसप्रकार करते हैं –

उवओगे उवओगो कोहादिसु णत्थि को वि उवओगो।
कोहो कोहे चेव हि उवओगे णत्थि खलु कोहो।।181।।
अट्ठवियप्पे कम्मे णोकम्मे चावि णत्थि उवओगो।
उवओगम्हि य कम्मं णोकम्मं चावि णो अत्थि।।182।।
एदं तु अविवरीदं णाणं जइया दु होदि जीवस्स।
तइया ण किंचि कुव्वदि भावं उवओगसुद्धप्पा।।183।।

उपयोग में उपयोग है अर्थात् भगवान आत्मा (उपयोग) ज्ञान–दर्शन में (उपयोग) है, क्रोधादिक में नहीं है। क्रोध, क्रोधा में है, ज्ञान–दर्शन में नहीं; आठ प्रकार के कर्मों में भगवान आत्मा नहीं है और भगवान आत्मा में आठ प्रकार के कर्म नहीं है। इसप्रकार आचार्य ने क्रोध कहकर भावकर्म से एवं आठ कर्म कहकर द्रव्यकर्म से इस आत्मा को पृथक् बताया। नोकर्म अर्थात् स्त्री, पुत्र, शरीर इत्यादि में उपयोग नहीं है और उपयोग स्वरूप भगवान आत्मा में नोकर्म अर्थात् शरीर, स्त्री–पुत्रादि –नगर–देश–ग्राम आदि नहीं हैं। – ऐसा कथन करके नोकर्म से भी आत्मा को पृथक् बताया। इसप्रकार 29 प्रकार के बोलों को आचार्य ने इन तीन भागों में समाविष्ट किया है एवं उनसे उपयोग को भिन्न बताया है।

निष्कर्ष में आचार्य कहते हैं कि जब जीव को इसप्रकार का अविपरीत ज्ञान होता है। तब यह उपयोग स्वरूप शुद्धात्मा उपयोग के अतिरिक्त अन्य किसी भी भाव को नहीं करता।

द्रव्यकर्म, भावकर्म नोकर्म में आत्मा नहीं है। आत्मा, आत्मा में है – इसप्रकार जानना ही अविपरीत ज्ञान है और इनमें आत्मा है – ऐसा मानना विपरीत ज्ञान है। जब इस जीव को अविपरीतज्ञान होता है तब यह शुद्धोपयोग का, निर्मलभावों का ही कर्त्ता होता है, ज्ञानभावों का ही कर्त्ता होता है, अज्ञानभावों का कर्त्ता नहीं होता है। यद्यपि इसके जीवन में रागादिक भावकर्म, ज्ञानावरणादिक द्रव्यकर्म एवं शरीरादि नोकर्म होते हैं; लेकिन यह विपरीत ज्ञान रहित जीव इन्हें अपना नहीं मानता है और इनका कर्त्ता नहीं बनता, वह स्वयं को निर्मल परिणमन का ही कर्त्ता मानता है – यही आशय है – 'शुद्धोपयोग के अतिरिक्त कुछ नहीं करता' – इस कथन का।

यह शुद्धोपयोग 24 घंटे प्रतिक्षण हो – ऐसा नहीं है। वस्तुतः बात यह है कि आत्मानुभूतिपूर्वक जो मिथ्यात्व एवं अनंतानुबंधी का अभाव हुआ है; वह निरन्तर कायम है, तज्जन्य शुद्धि भी निरन्तर कायम है।

ज्ञानी आत्मा उक्त शुद्धि का कर्त्ता तो अपने को मानता है; किन्तु उसीसमय विद्यमान शेष कषायों जन्य अशुद्धिरूप भावकर्म, द्रव्यकर्म एवं शरीरादि नोकर्म का कर्त्ता–भोक्ता स्वयं को नहीं मानता, उनमें एकत्व–ममत्व भी नहीं करता।

यद्यपि दृष्टि के विषय में वह निर्मल पर्याय नहीं है; तथापि ज्ञानी उस परिणमन में स्वयं का एकत्व, ममत्व, कर्त्तृत्व और भोक्तृत्व स्वीकार करता है। ज्ञानी के विकल्प के काल में शुद्धोपयोग नहीं है; परन्तु शुद्धपरिणति विद्यमान है। परिणति भी पर्याय का नाम है। शुद्धता पर्याय में विद्यमान है। इस पर्यायरूपी कार्य का कर्त्ता कौन ? इसके उत्तर में आचार्य कहते हैं – यः परिणमति सः कर्त्ता।

अर्थात् जो उस पर्यायरूप परिणमित हुआ है। वही उस पर्याय का कर्त्ता है। आत्मा उस शुद्धपरिणतिरूप परिणमित हुआ है; अतः आत्मा ही उस परिणति का कर्त्ता है।

यद्यपि ज्ञानी के बुद्धिपूर्वक पढ़ना–पढ़ाना, दण्ड देना, क्रोधित होना; इत्यादि सांसारिक प्रवृत्तियाँ होती है। इस अवस्था में यदि इसे पूछें कि – 'तुमने क्या किया ?' इसपर ज्ञानी यही उत्तर देता है कि – 'मैंने कुछ नहीं किया, मैं शुद्धभाव के अतिरिक्त कुछ भी नहीं करता हूँ। मैंने उसे मात्र देखा–जाना है।' इसका आशय यह है कि ज्ञानी की कर्त्तृत्वबुद्धि सहजभाव से देखने–जाननेरूप परिणमन में है। सहज ज्ञाता–द्रष्टारूप जो ज्ञान हुआ, ज्ञानी उनका कर्त्ता है; जो जाननेरूप क्रिया हुई; ज्ञानी उसका कर्त्ता है।

संवर अर्थात् कर्म के बंधन का रुक जाना; संवर अर्थात् आत्मा में ऐसे परिणाम उत्पन्न न होना, जिनसे कर्मों का आस्रव होता है अर्थात् मिथ्यात्व, अनंतानुबंधी आदि का न होना ही संवर है।

कर्म के संवर करने के उपाय के रूप में इस अधिकार में एक सूत्र दिया है जो अत्यंत महत्त्वपूर्ण है –

सुद्धं तु वियाणंतो सुद्धं चेवप्पयं लहदि जीवो।
जाणंतो दु असुद्धं असुद्धमेवप्पयं लहदि।।186।।

जो जीव अपने आत्मा को शुद्ध जानता है, वह जीव शुद्धता को प्राप्त होता है एवं जो जीव स्वयं को अशुद्ध जानता है, वह अशुद्धता को प्राप्त करता है।

यदि हमें हमारी आत्मा की शुद्धता को प्राप्त करना है तो उसे शुद्ध जानना होगा; तब शुद्धता प्राप्त होगी। यदि हमें अशुद्धता प्राप्त करनी है तो आत्मा को अशुद्ध जानना होगा; तब ही अशुद्धता को प्राप्त होंगी। **(क्रमशः)**

रजिस्ट्रेशन आर. एन. आई. 31109/77

श्री टोडरमल स्मारक भवन जयपुर में

श्री कुन्दकुन्द कहान दिग. जैन तीर्थसुरक्षा ट्रस्ट, मुम्बई द्वारा संचालित

पच्चीसवाँ बृहद् आध्यात्मिक शिक्षण शिविर

(रविवार, दिनांक 4 अगस्त से मंगलवार, दिनांक 13 अगस्त, 2002 तक)

श्री कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन तीर्थसुरक्षा ट्रस्ट, मुम्बई द्वारा श्री टोडरमल स्मारक भवन, जयपुर में दिनांक 4 अगस्त से 13 अगस्त 2002 तक बृहद् आध्यात्मिक शिक्षण शिविर का आयोजन किया जा रहा है।

शिविर में अध्यात्मजगत के प्रसिद्ध प्रवक्ता बाबू जुगलकिशोरजी 'युगल' कोटा, डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल जयपुर, डॉ. उत्तमचन्दजी जैन सिवनी, पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल जयपुर, ब्र. यशपालजी जैन बेलगाँव, पण्डित प्रदीपकुमारजी झांझरी उज्जैन, पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील जयपुर, पण्डित अनुभवप्रकाशजी शास्त्री जबलपुर, पण्डित संजीवकुमारजी गोधा जयपुर, पण्डित पीयूषकुमारजी शास्त्री छतरपुर, पण्डित दिनेशभाई शाह मुम्बई, डॉ. उज्ज्वला शाह मुम्बई आदि अनेक विद्वानों का प्रवचन, कक्षाओं एवं तत्त्वचर्चा के माध्यम से लाभ मिलेगा। साथ ही व्याख्यानमाला के माध्यम से अन्य अनेक विशिष्ट विद्वानों द्वारा विविध विषयों के व्याख्यानों का लाभ भी प्राप्त होगा।

सम्पूर्ण कार्यक्रम ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री सनावद, पण्डित पूनमचन्दजी छाबड़ा इन्दौर एवं श्री अमृतभाई मेहता फतेपुर के कुशल निर्देशन में सम्पन्न होंगे।

सभी साधर्मी बन्धुओं को ऐसे मांगलिक अवसर पर सपरिवार एवं इष्ट मित्रों सहित पधारकर धर्मलाभ लेने हेतु हमारा वात्सल्यपूर्ण हार्दिक आमंत्रण है।

विनीत :

नेमीचन्द पाटनी
महामंत्री,
श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय, जयपुर

बसन्त एम. दोशी
महामंत्री,
श्री कुन्दकुन्द कहान दि. जैन तीर्थसुरक्षा ट्रस्ट, मुम्बई

दशलक्षण पर्व हेतु आमंत्रण-पत्र शीघ्र भेजें

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर के पास दशलक्षण पर्व के पावन अवसर पर प्रवचनकार विद्वान भेजने हेतु प्रतिवर्ष दिगम्बर जैनसमाज के सैंकड़ों पत्र प्राप्त होते हैं; पर हम सभी जगह विद्वान उपलब्ध नहीं करा पाते हैं; अत: इस वर्ष 'पहले आओ पहले पाओ' की तर्ज पर यह व्यवस्था की जा रही है। एतदर्थ 15 जुलाई 2002 तक प्राप्त होनेवाले आमंत्रणों पर ही विचार करना संभव हो सकेगा, इसके बाद आनेवाले पत्रों पर विचार करना संभव न हो सकेगा। पते में फोन व एस. टी. डी. कोड नम्बर लिखना न भूलें।**– मंत्री, पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट**

जैनपथप्रदर्शक (पाक्षिक) **जुलाई (प्रथम) 2002**
आई. आर. / R. J. **3002/02**

प्रति,

सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., बी.एड.
प्रबन्ध सम्पादक : **पण्डित अनुभवप्रकाश** जैनदर्शनाचार्य, एम.ए., बी.एड. एवं **पण्डित संजीवकुमार गोधा**, एम.ए.
प्रकाशक एवं मुद्रक : **ब्र. यशपाल जैन** द्वारा जैनपथप्रदर्शक समिति के लिए जयपुर प्रिण्टर्स प्रा.लि., एम. आई. रोड, जयपुर से मुद्रित तथा त्रिमूर्ति कम्प्यूटर्स, ए-4, बापूनगर, जयपुर से प्रकाशित।

यदि न पहुँचे तो कृपया निम्न पते पर भेजें –
ए- 4 बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)
फोन : (0141) 515581, 707458
तार : त्रिमूर्ति, जयपुर **फैक्स :** 704127